सोफिया, बुल्गारिया
२९ मार्च, २००९

संदेश संख्या – १६९

मौन क्या है?

बाहर से आरोपित मौन वस्तुतः छद्म कोलाहल है । विभेदकारी चित्तवृत्ति को जब संकल्प (अहंकार) द्वारा स्थिर किया जाता है तो वह शान्तिपूर्ण व्यापक सचेतनता नहीं होती । कृत्रिमता द्वन्द्व की स्थिति है। यह अन्तर्जगत में विभाजन अर्थात् भ्रान्ति 'मैं' को प्रोत्साहित करती है जो कि मानव–जीवन के प्रत्येक स्तर पर द्वन्द्व, दुविधा और अराजकता को उत्पन्न करता है । विभाजन को बनाए रखने पर भगवत्ता के आशीर्वाद का अवतरण कैसे हो सकता है ? अन्तर्जगत में 'बनने' की प्रक्रिया अर्थात् मानसिक–समय का पूर्णतः अस्वीकार ही अस्तित्व का परमानन्द है। और यही मौन है ।

इसे बाजार में बिकने वाले योग के आत्म–सम्मोहक तकनीकों द्वारा या परस्पर विरोधी 'जेन–कोन्स' द्वारा उपलब्ध नहीं हुआ जा सकता है ।

बिना समाज–विरोधी, समाज–सुधारक या किसी का विरोधी बने, हमें अपने अन्दर कार्यरत कृत्रिमता को प्रोत्साहित करने वाले सामाजिक मान्यताओं एवं बन्धनों से स्वयं को मुक्त कर लेना चाहिए । काल्पनिक छवि बनाने वाला यन्त्र ''मैं'' के सतत् आडम्बर एवं अभिमान और दूसरों के प्रति इसका गुप्त एवं विध्वंसक शत्रु–भाव, दर्प एवं आक्रामकता के कारण व्यक्ति के अन्तर्जगत में भयंकर पूर्वाग्रहों एवं अनुबन्धनों का जन्म होता है । किन्तु व्यक्ति इन पूर्वाग्रहों एवं अनुबन्धनों से पूर्णतया मुक्त हो सकता है और जब ऐसा होता है तब व्यक्ति पूर्व के भयंकर अनुबन्धनों के कारण घुटन का अनुभव नहीं करता ।

डूबने का डर ही तैरने की सहज क्रिया को असहज बना देता है । अन्यथा, जल में तो उत्प्लावकता अर्थात् ऊपर फेंकने का बल नामक गुण है ही, जो आपको तरणशील बनाए रखने में सक्षम है । प्रत्येक कार्य को समझना तथा उसके प्रति प्रयत्न शैथिल्य–भाव में होना ही मौन को उपलब्ध होना है ।

तुम्हारे शरीर का ८० भाग जल है, और पृथ्वी के ८० भाग में भी जल है । इसे समझना प्रकृति तथा परिवेश के साथ सामंजस्य में होना है । यही परम शान्ति और गहन मौन है ।

विभेदकारी चित्तवृत्ति (मन) का उदय वासना से तथा वासना विकल्पों से निर्मित होती है और यही चित्तवृत्ति इन्द्रिय–प्रत्यक्षबोध (अर्थात् जीवन) में हस्तक्षेप करने लगती है । कामुकता अर्थात् मन जो कि काम–उर्जा यानि कि जीवन में हस्तक्षेप है । इसे समझने के लिए मौन को जानना होगा । यह समझदारी की अपार ऊर्जा है । यह मौन जीवन्त है, जीवन है क्योंकि यहाँ 'मैं' का अन्त हो जाता है । जब मौन अभिव्यक्त होता है तब 'तुम' वहाँ नहीं होते। अतः मौन का अनुभव नहीं होता ।

कृष्ण–चेतना, बुद्ध–चेतना, ईसामसीह–चेतना या जिस किसी में भी तुम्हारी आसक्ति है, सभी तुम्हारी आत्मकेन्द्रित गतिविधियाँ अर्थात् अहंकार की यात्राएँ हैं । इनके सम्मोहन के प्रभाव से मौन की प्रतीति होती है परन्तु वे परम पवित्र मौन से वस्तुतः दूर ले जाती हैं ।

पैगम्बरों, उद्धारकों और धार्मिक शिक्षकों की शिक्षा की परिणति मात्र हिंसा है । इनमें से प्रत्येक ने शान्ति और प्रेम की बात की है परन्तु उनके शिष्यों ने हिंसा का मार्ग अपनाया है । अनुसरण ध्वंसात्मक होता है । धार्मिक–जीवन ध्यानशील होता है । वहाँ 'मैं' की गतिविधि न होकर केवल मौन की प्रक्रिया होती है। संगठित धर्म माफिया हैं जो हमारी स्नायवीय समस्या के परिणामस्वरूप हैं परन्तु मौन के अवतरण से अन्य सब कुछ मिट जाता है । मौन अत्यधिक ऊर्जा मुक्त करता है जो विचारों की सततता में विस्फोट कर जीवन को अनुप्राणित करता है । मौन ऊर्जा का विस्फोट है, न कि मृतप्राय अवस्था, जैसा कि तथाकथित आध्यात्मिक पथ के पथिक समझते हैं । यह तो सागर की गर्जना है जो अभ्यास या शिक्षण के क्षेत्र से बाहर है ।

।। जय परम मौन ।।